अहिल्या पत्थर बनी थी ?

हनुमान जी बानर थे ?

★

पंडित जे० पी० चौधरी काव्यतीर्थ

★

चौधरी एण्ड सन्स नीचीबाग वाराणसी

मूल्य पचास पैसा

क्या हनूमान आदि पूँछवाले बानर पशु थे ?

यह प्रश्न साधारणतः उठ खड़ा होता है क्योंकि जनता में यही प्रचार है। हनुमान की मूर्ति सर्वत्र पूँछ के साथ देखी जाती है, परन्तु जब बाल्मीकीय रामायण पढ़ते हैं तो विचार एकदम पलट जाता है और उन्हें मनुष्य ही मानना पड़ता है।

बाल्मीकि ऋषि राम के समकालीन थे इसलिये उसी के आधार पर हम दिखलाना चाहते हैं कि वे वन्यपशु न थे, किन्तु मानव शरीरी थे। उनकी जाति ही बानर नाम से प्रसिद्ध थी। इनकी सभ्यता बड़ी उच्च थी।

जिस समय सुग्रीव बाली द्वारा तिरस्कृत ऋष्यमूकपर्वत पर उसके डर के मारे रहता था, उस समय राम और लक्ष्मण दिखलाई दिये। सुग्रीव उन्हें देखकर शंकाग्रस्त हो गया। उसने समझा कि बाली ने ही मुझे मारने के लिये ही उन्हें भेजा होगा। तब उसने हनुमान को खबर लेने के लिये उनके पास भेजा, उस समय वे भिक्षु रूप धारण करके गये और उनसे बातचीत की, जिससे पता लगता है कि वे वेद शास्त्र व्याकरण के बड़े पण्डित थे। यथा :—

सचिवोऽयं कपीन्द्रस्य सुग्रीवस्य महात्मनः ॥२७॥
नानृग्वेदविनीतस्य नायजुर्वेदधारिणः।
नासामवेदविदुषः शक्य मेवं विभाषितुम् ॥२८॥
नूनं व्याकरणं कृत्स्नं अनेन बहुधा श्रुतम्।
बहुव्याहरतानेन न किञ्चिदपभाषितम् ॥२९॥

न मुखे नेत्रयोश्चापि ललाटे च भ्रुवोस्तथा ।
अन्येष्वपि च सर्वेषु दोषः संविदितः क्वचित् ॥३०॥
अविस्तरं असंदिग्धं अबिलम्बितम व्यथम् ।
उरस्थं कण्ठगं वाक्यं वर्तते मध्यमस्वरम् ॥३१॥
उच्चारयति कल्याणीं वाचं हृदय हर्षिणीम् ।
अनया चित्रया वाचा त्रिस्थान व्यंजनस्थया ॥३२॥
कस्य नाराध्यते चित्तं उद्यतासेररेरपि ॥३३॥
एवं विधो यस्य दूतो न भवेत् पार्थिवस्य तु ।
सिध्यन्ति हि कथं तस्य कार्याणां गतयोऽनघ ॥३४॥

किष्किन्धा काण्ड सर्ग ३ ॥

हे लक्ष्मण ! यह वानरराज सुग्रीव का मन्त्री (हनूमान) मेरे पास आया है। जिसने ऋग्वेद का अध्ययन नहीं किया है,जिसने यजुर्वेद धारण नहीं किया है, जो समवेद नहीं जानता वह इस प्रकार का भाषण नहीं कर सकता। इसने तो सम्पूर्ण व्याकरण का अध्ययन किया है। इतनी देर तक भाषण करते रहने पर भी एक भी अशुद्धि इसके भाषण में नहीं हुई है। इसका भाषण कहीं भी असङ्गत नहीं है, संदिग्ध नहीं है, अस्खलित प्रवाह से बोलने पर भी श्रोता को इससे कहीं उवकाहट नहीं आती। यह मध्यम स्वर धीमा और स्पष्ट है। इस प्रकार का यह दूत किसका चित्त आकर्षित नहीं करेगा ? तलवार खींचकर आक्रमण करने की इच्छा वाला शत्रु भी इसका भाषण सुनकर ही स्तब्ध हो जायेगा। ऐसा योग्य दूत जिस राजा के पास होगा उसके कार्य निःसन्देह सफल होंगे। दूत हों तो ऐसा हो।

श्रीराम के मन पर हनूमान के बोलने का यह परिणाम हुआ। इससे यह सिद्ध होता है कि हनूमान बहुत बड़े विद्वान थे। वानर राज्य

के मन्त्रियों की विद्वत्ता का स्तर कितना उच्च था यह इस बात से सिद्ध होता है !

राज्य शासन के अधिकारी एवं राजदूत पद के अधिकारी वानर राज्य में भी कितने विद्वान और योग्य नियुक्त किये जाते थे यह उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट दिखलाई देता है—

वेद जाननेवाला, संस्कृत में अस्खलित भाषण करने वाला पुच्छ-धारी वानर पशु नहीं हो सकता किन्तु वानर मनुष्य जाति का एक नाम ही था ।

बाली का सन्ध्या करना

रावणो वालिनं दृष्ट्वा सन्ध्योवासन तत्परम् ।
इत्येवं मतिमास्थाय वाली मौनमुपास्थितः ।
जपन् वै नैगमान् मन्त्राँस्तस्थौ पर्वतखण्डवत् ॥१८॥
पश्चिमं सागरं वाली आजगाम सरावणः ॥२८॥
तस्मिन् सन्ध्यामुपासित्वा स्नात्वा जप्त्वा च वानरः ॥२६॥
उत्तरे सागरे सन्ध्यामुपसित्वा दशाननम् ।
वहमानोऽगमद्वाली पूर्वं वै स महोदधिम् ॥३१॥
रात्रापि सन्ध्यां अन्वास्य वासितः स हरी श्वरः ।
किष्किन्धामभितो गृह्य रावणं पुनरागमत् ॥३२॥
चतुर्ष्वपि समुद्रेषु सन्ध्यामन्वास्य वानरः ॥३३॥

उत्तर काण्ड सर्ग ३४

रावण वाली को जीतना चाहता था, तदनुसार उसने बाली पर आक्रमण किया और निःशब्द गति से बाली को पकड़ना चाहा । बाली उस समय सन्ध्या कर रहा था और मौन धारण कर बैठा था । वैदिक

मन्त्रों के अर्थ पर ध्यान करता हुआ पर्वत के सदृश वह स्थिर एवं अचल रूप में था।

वेद वेदांगों में निष्णात होने के कारण बाली वैदिक मन्त्रों के आशय पर ध्यान कर रहा था। निकट आते ही बाली ने रावण को हाथ से पकड़ कर खींच लिया। उसे पकड़कर बालि पश्चिम समुद्र के किनारे ले गया और वहाँ पर स्नान के उपरान्त सन्ध्या एवं मन्त्र जप आदि का अनुष्ठान किया। वहाँ से उत्तर सागर के तट पर पहुँचकर उसने सन्ध्या-वन्दन किया। उसके पश्चात् पूर्व समुद्र के किनारे आकर वहाँ पर सन्ध्यादि कृत्य निपटाकर बाली रावण को साथ लिये किष्किन्धा आ पहुँचा।

कथा में बहुत ही अत्युक्ति है, कवि लोगों की कल्पना ही इसी प्रकार होती है। बुद्धिमानों को कथा-भाग में से अत्युक्तियों को अलग करके ऐतिहासिक तथ्य की ओर जाना चाहिये। इस कथा में तथ्य यही है कि बाली सन्ध्या करता था इससे यह भी परिणाम निकलता है कि इस जाति के सब ही शिक्षित वर्ग सन्ध्या करते थे।

वानरों की और्ध्वदैहिक क्रिया

मृत बाली को पालकी में श्मशान तक ले जाया गया, और वहाँ :—

चितामारोपयामास शोकेनाभिप्लुतेन्द्रियः ॥४६॥
ततोऽग्निं विधिवद्दत्वा सोपसव्यं चकार ह।
पितरं दीर्घमध्वानं प्रस्थितं व्याकुलेद्रियः ॥५०॥
संस्कृत्य वालिनं तं तु विधिवत्प्लवगर्षभाः।
आजग्मुरुदकं कर्तुं नदीं शुभजलां शिवाम् ॥५१॥

ततस्ते सहितस्तत्र अंगदं स्थाप्य चाग्रतः ।
सुग्रीबतारासहिताः सिषिचुर्वानरा जलम् ॥५२॥

किष्किन्धा काण्ड सर्ग २५

सुग्रीव की सहायता से अंगद ने पिता को चिता पर रख दिया। तदनन्तर व्याकुल इन्द्रियोंवाला अंगद परलोक यात्रा को जाते हुए पिता को विधिपूर्वक अग्नि देकर अपसव्य हो गया अर्थात् उसने यज्ञोपवीत को दक्षिण कन्धे पर रख लिया। वे वानर विधिपूर्वक वाली का अग्नि-संस्कार कर शीतल जल वाली कल्याणकारिणी नदी में स्नान आदि करने आये। फिर वहाँ अंगद को आगे करके सुग्रीव और तारा समेत एकत्रित वानरों ने वाली को जलाञ्जलि दिया। इससे सिद्ध है कि वे मनुष्य थे, वेद-शास्त्र को माननेवाले थे। कौन कह सकता है कि ये पशु थे।

वानरों के निवास-गृह

वानराधिपति सुग्रीव की राजधानी किष्किन्धा में वानरों के भवनों की रचना कितनी कौशल्यपूर्ण थी, उसे वाल्मीकिजी की वाणी में सुनिये और लक्ष्मण के साथ देखिये :—

स तां रत्नमयीं दिव्यां श्रीमान्पुष्पितकाननाम् ।
रम्यां रत्नसमाकीर्णां ददर्श महतीं गुहाम् ॥४॥
हर्म्यप्रासादसंबाधां नानारत्नोपशोभिताम् ।
सर्वकामफलैर्वृक्षैः पुष्पितैरुपशोभिताम् ॥५॥
देव गन्धर्वपुत्रैश्च वानरैः कामरूपिभिः ।
दिव्यमाल्म्बरधरैः शोभितां प्रियदर्शनैः ॥६॥
चन्दनागरुपद्मानां गन्धैः सुरभि गन्धिताम् ।
मैरेयाराणां मधूनां च संमोदितमहापथाम् ॥७॥

विन्ध्यमेरुगिरिप्रख्यैः प्रासादैर्नैकभूमिभिः ।
ददर्श गिरिनद्यश्च विमलास्तत्र राघवः ॥८॥
अंगदस्य गृहं रम्यं मैन्दस्य द्विविदस्य च ।
गवयस्य गवाक्षस्य गजस्य शरभस्य च ॥९॥
विद्युन्मालेश्च संपातेः सूर्याक्षस्य हनूमतः ।
वीरवाहोः सुवाहोश्च नलस्य च महात्मनः ॥१०॥
कुमुदस्य सुषेणस्य तारजाम्बवतोस्तथा ।
दधिवक्त्रस्य नीलस्य सुपाटलसुनेत्रयोः ॥११॥
एतेषां कपि मुख्यानां राजमार्गे महात्मनाम् ।
ददर्श गृह मुख्यानि महासाराणि लक्ष्मणः ॥१२॥
पाण्डुराभ्रप्रकाशानि गन्धमाल्ययुतानि च ।
प्रभूतधनधान्यानि स्त्री रत्नैः शोभितानि च ॥१३॥
पाण्डुरेण तु शैलेन परिक्षिप्तं दुरासदम् ।
वानरेन्द्रगृहं रम्यं महेन्द्रसदनोपमम् ॥१४॥
शुक्लैः प्रासादशिखरैः कैलासशिखरोपमैः ।
सर्वकामफलैर्वृक्षैः पुष्पितैरुपशोभितम् ॥१५॥
महेन्द्रदत्तैः श्रीमद्भिर्नीलजीमूतसंनिभैः ।
दिव्यपुष्पफलैर्वृक्षैः शीतच्छायैर्मनोरमैः ॥१६॥
हरिभिः संवृतद्वारं वलिभिः शस्त्रपाणिभिः ।
दिव्यमाल्यावृतं शुभ्रं तप्तकांचनतोरणम् ॥१७॥
सुग्रीवस्य गृहं रम्यं प्रविवेश महावलः ।
आवार्यमाणः सौवित्रिर्महाभ्रमिव भास्करः ॥१८॥
स सप्त कक्ष्या धर्मात्मा यानासनसमावृताः ।
ददर्श सुमहद्गुप्तं ददर्शान्तिः पुरं महत् ॥१९॥
हैमराजतपर्यङ्कैर्बहुभिश्च वरासनैः ।
महार्हास्तरणोपेतैस्तत्र तत्र समावृतम् ॥२०॥

प्रविशन्नेव सततं शुश्राव मधुरस्वनम् ।
तन्त्रीगीतसमाकीर्णं समतालपदाक्षरम् ॥२१॥
बह्वीश्च विविधाकारा रूपयौवनगर्विताः ।
स्त्रियः सुग्रीवभवने ददर्श स महाबलः ॥२२॥
दृष्ट्वाभिजनसंम्पन्नस्तत्र माल्यकृतस्रजः ।
वरमाल्यकृतव्यग्रा भूषणोत्तमभूषिताः ॥२३॥
नातृप्तान्नाति च व्यग्रान्नानुदात्तपरिच्छदान् ।
सुग्रीवानुचरांश्चापि लक्षयामास लक्ष्मणः ॥२४॥
कूजितं नू पुराणां च काञ्चीनां निःस्वनं तथा ।
स निशम्य ततः श्रीमान्सौमित्रिर्लज्जितोऽभवत् ॥२५॥

किष्किन्धा काण्ड सर्ग ३३

किष्किन्धा नगरी में प्रवेश करते समय लक्ष्मण ने राजपथ के दोनों ओर पुष्पित वनवाली रत्नों से पूर्ण, रत्नमयी दिव्य महल और देवगृहों से युक्त, अनेक दुकानों से शोभित, पुष्पित सर्व कामनाओं वाले फलों से युक्त, वृक्षों से शोभित, कामरूपी दिव्य वस्त्र और फूलों को धारण करनेवाले, देखने में प्रिय, देव गन्धर्वों के पुत्र वानरों से शोभित, श्रेष्ठ गन्धवाले चन्दन, अगरु और पद्म, मैरेय और मधु की गन्धों से सुगन्धित मार्गवाली तथा विन्ध्य और मेरु पर्वत के समान अनेक प्रकार की भूमिवाले महलों से सुशोभित बड़ी किष्किन्धा को देखा। लक्ष्मण ने वहाँ पर विमल जल वाली पर्वत की नदियों को देखा। लक्ष्मण ने राज-मार्ग में अंगद का रमणीय घर, मैन्द, द्विविद, गवय, गवाक्ष, गज, शरभ, विद्युन्मालि, सम्पाति, सूर्याक्ष, हनुमान, वीरबाहु, सुबाहु और महात्मा नल-नील, कुमुद, सुषेण, तार, जाम्बवान, दधि वक्त्र, नील सुपाटल और सुनेत्र इन महात्मा मुख्य वानरों के दृढ़-श्वेत बादलों के सदृश प्रकाशित दिव्य पुष्पादि द्रव्यों से

युक्त, प्रचुर धनधान्य युक्त स्त्रीरूप रत्नों से सुशोभित मुख्य गृहों को देखा। महावली लक्ष्मण ने चूने से पुते परकोटे से घिरे हुए इन्द्र भवन के समान कैलास शिखर के सदृश श्वेत प्रासाद शिखरों से युक्त, सब कामनाओं को देनेवाले फलोंवाले पुष्पित वृक्ष और इन्द्र से दिये हुए शोभायमान, नील मेघों के सदृश दिव्य पुष्प फलोंवाले शीतल छाया-वाले मनोरम वृक्षों से सुशोभित, शस्त्र ग्रहण किये बलवान बानरों से संवृत द्वारवाले, दिव्यमाल्यादि द्रव्यों से युक्त उज्ज्वल, तप्त सुवर्ण के तोरणवाले रम्य वानरेन्द्र सुग्रीव के गृह में प्रवेश किया।

धर्मात्मा लक्ष्मण ने अनेक जनों से व्याप्त सात ड्योढ़ियों में प्रवेश कर अच्छी तरह रक्षित, बहुत से श्रेष्ठ आसन तथा बहुमूल्य बिछौनों से युक्त, सोने चाँदी के बहुत से जहाँ-तहाँ शोभित-बड़े अन्तःपुर (रनिवास) को देखा। घुसते ही वीणादि बाजों से उत्पन्न तन्त्रीलय और गीती से व्याप्त गीत, पद और अक्षरों वाले मधुर स्वर को लक्ष्मण ने सुना और सुग्रीव के भवन के अनेक आकार वाली रूप और यौवन से गर्वित बहुत-सी स्त्रियों को देखा। जातीय मनुष्यों से युक्त, चित्रित फूलों की मालावाली, वर माल्यादिकों के सम्पादनार्थ, घबड़ाई हुई, उत्तम भूषणों से भूषित स्त्रियों को देखकर तृप्त, सुखी, श्रेष्ठ वस्त्रधारी सुग्रीव के सेवकों को भी देखा। तदन्तर श्रीमान् सुमित्रापुत्र लक्ष्मण नूपुरों की झंकार और तकड़ियों की आवाज सुनकर लज्जित हो गये।

किष्किन्धा नगरी में प्रवेश करते समय लक्ष्मण ने राजपथ के दोनों ओर बड़े-बड़े महल, आकाश को छूनेवाले घर, अट्टालिकायें और राजमहलों के ऊँचे-ऊँचे शिखर देखा। वानर सरदारों के वृहदाकार, ऊर्ध्वगामी घर लक्ष्मण की दृष्टि में आये। सभी घरों की रचना सुदृढ़ नींव पर हुई थी और सफेद चूने से वे लीपे गये थे। इन्द्र भवन के समान वे विस्तीर्ण, कैलास के शिखरों के समान उनके कलश ऊँचे और सुहावने थे। उनकी शोभा हिमालय सदृश थी। घरों में सोने और

चाँदी के पलङ्ग थे और उनपर मूल्यवान कपड़े फैलाये हुए थे तथा वे वस्त्रों से ढँके हुए थे। वीणादि बाजों से उत्पन्न तन्त्रीलय और समान गीत, पद और अक्षरों वाले गीतों के स्वर में महल गुञ्जायमान तथा भूषणों से भूषित लावण्यमयी स्त्रियों से शोभायमान थे। सुग्रीव का राजप्रसाद इतना लम्बा था कि उसके निवास स्थान तक पहुँचने के लिये लक्ष्मण को सात चौंक (सप्त कक्ष्यः) लाँघकर जाना पड़ा और इन सातों कक्षाओं में विभिन्न वाहन तथा आसन व्यवस्थापूर्वक रक्खे गये थे। जो लोग वानरों को वन पशु समझते हों वे ऊपर के वर्णन को देखें ताकि उन्हें पता चल जाय कि वे मनुष्य थे या जङ्गली वानर।

सेतुबन्ध के यांत्रिक साधन

> हस्तिप्रायान् महाकायान् पाषाणांश्च महाबलाः।
> पर्वतान् च समुत्पाट्य यंत्रैः परिवहन्ति च॥

अर्थात् हाथी के समान बड़े-बड़े पत्थर और शैलखण्ड (पहाड़ के टीले) जड़मूल से उखाड़ कर बड़े-बड़े डौलडौल वाले वानर वीर यंत्रों द्वारा उन्हें ढो रहे थे। इस श्लोक में समुत्पाट्य और यंत्रैः शब्द ये दोनों शब्द विशेष ध्यान देने योग्य हैं। क्योंकि हाथियों जैसे बड़े-बड़े पत्थर इतने साधारण नहीं होते कि गैंती या बेलचों से उखाड़ डाले जायँ। अतः उनको जड़मूल से उखाड़ने का अन्य कोई अधिक शक्तिमान साधन वानरों के पास होने का निश्चय किया जा सकता है। समुत्पाट्य शब्द का अर्थ है, अच्छी तरह या आसानी से उखाड़ कर। अर्थात् बड़े-बड़े हस्तिप्राय पत्थर और शैलखण्ड बिना खोदे समूल खोदने उखाड़ने का (Blasting करने का) कोई साधन (सुरंग लगाने या पत्थर तोड़ने का बारूद अथवा तत्सम कोई अन्य पदार्थ) वानरों को मालूम था।

जो कि अनुमानतः वर्नमान सुधरे हुए यूरोपीय राष्ट्र जिसे (Blasting Powder) या डायनामाइट कहते हैं, ऐसा ही कुछ हो सकता है। अन्यथा उत्पाट्य शब्द का प्रयोग यथार्थ हो हो नहीं सकता।

उन पत्थरों को ढोने के लिये भी कोई शक्तिमान और सुधरा हुआ साधन होना ही चाहिये। इसका अनुमान "यंत्रैः परिवहन्ति" इस वर्णन से हो सकता है।

सेतु कैसे बाँधा गया इसका वर्णन भी वाल्मीकि के शब्दों में सुनिये—

सूत्राण्यमन्ये प्रगृह्णन्ति ह्यायतं शतमोजनम्।
दण्डान्यन्ये प्रगृह्णन्ति विचिन्वन्ति तथा परे॥

युद्धकाण्ड २२।५८-६०

नलश्चचक्रे महासेतुं मध्ये नदनदीपतेः॥

कोई वानर वीर हाथ में सूत्र (Measuring tap) लिये लम्बाई-चौड़ाई नापने का काम करने पर नियुक्त था, कोई दण्डा (Measuring pole) हाथ में लिये ऊँचाई-निचाई (Level) देखते थे, शेष वानर वीर पत्थर, मिट्टी, वृक्षादि लाकर गड्ढों में डालते थे और पाटकर बराबर कर देते थे।

वाल्मीकिजी के इस वर्णन से यह स्पष्ट मालूम होता है कि वानरों पास अतिशय शक्तिशाली और वेगवाली यंत्र सामग्री (Extermely powerful and speedy machinary) थी। अर्थात् वानर बर्बर नहीं थे।

वर्नमानकालीन मिलिटरी इंजिनिअरिंग वेड़ों के पुल वगैरह बनाने के काम इसी प्रकार होते हैं। इससे मालूम होता है कि त्रेतायुगीय वानर

आधुनिक मिलिटरी इंजिनिअरिंग में पीछे नहीं थे, किन्तु उनसे बढ़कर थे क्योंकि पाँच ही दिन में इतमे लम्बे समुद्र पर पुल बाँध दिया।

कुछ भारतीय विद्वान् कहेंगे कि लेखक को अपनी संस्कृति बड़ी उच्च थी, इसको प्रमाणित करने के लिए मनगढ़न्त अर्थ करके जनता को भुलावे में डाल रहे हैं। क्योंकि बारूद का आविष्कार सबसे पहले योरोप में सन् १२४७ में फ्रायन वेकन नामक एक योरोपियन रासायनिक ने किया है। इसके पूर्व जब बारूद संसार में थी ही नहीं तो वह रामायण कालीन भारतवर्ष में कहाँ से आवेगी।

वर्तमान प्रश्नकर्त्ता को जानकारी के लिए यूरोपीय विद्वानों की कुछ सम्मतियाँ यहाँ दी जाती है :—

१—नेपोलियन बोनापार्ट अपने (Aid memory to military sinees) नामक ग्रन्थ में लिखते हैं :—

Gun-Powder was known to India and China and was used for the Purpose of war many century before ehristian Era.

अर्थात् बारूद बनाना और उसका युद्ध में प्रयोग करना दोनों बातें भारतीय तथा चीनी लोगों को सन् ईस्वी के कई शताब्दी पूर्व मालूम थी।

२—ग्रीनर नामक एक पाश्चात्य विद्वान् अपने (Guunery in 1857) नामक ग्रन्थ में लिखता है :—

The in habitants of India were unqnestionably acquainted with its (gunpowder) composition at an early date.

अर्थात् भारतीय लोग बहुत प्राचीनकाल से बारूद और उसके घटक द्रव्यों को जानते थे। यही ग्रन्थकार फिर कहता है—

Alaxander is supposed to have avoided attacking the mydracca, a people dwelling the Hydaphasis and Ganges, from a report of this having supernatural means of defence, for it is said. They do not come out to fight those who attacked theme, but those holy people, beloved by God, over throw their enemies, with tempest and thunder bolts shot from their walls and when Egyptian Here culese and Baccus over-run India. They attacked those people, but were repulsed with storms of thundarbolts and lighthning, hurled from above. This is no doubt evedence of the use of gunpowder.

सुना है कि जगत् विजयी सिकन्दर ने गंगा और ब्रह्मपुत्र नदियों के बीच के प्रदेश में जो आक्सिड्र का जाति के लोग रहते थे, जब उनपर आक्रमण करने का विचार किया, तभी उसको किसी ने कहा था कि वे लोग बड़े विकट हैं। उनपर कोई शत्रु आक्रमण करने जाय तो वे उनसे लड़ने के लिए अपने किले से बाहर नहीं निकलते, परन्तु वे ईश्वर के प्यारे और पवित्र लोग किलों के प्राचीरों पर से ही उन आक्रमणकारियों पर वज्र बरसा कर उनका नाश करते थे। जब मिश्र देश के हरक्यूलीज और बेकस दोनों भारत पर चढ़ाई करके आये थे तब उन लोगों ने अपने किले के प्राचीरों पर से ही उनपर विद्युत और वज्रों की वर्षा करके उनको भगा दिया था। ग्रन्थकार ग्रीनर कहता है

कि भारतवर्ष में उस समय तोपों में चलानेवाली बारूद का व्यवहार युद्ध में होता था इसका यह असंदिग्ध प्रमाण है—

१—प्रेसिडेन्सी कालेज मदरास के प्राध्यापक गस्टाव आपर्ट एम० ए० पी० एच० डी० अपने Weapones, Army Organisation and Potitical maxims of the aucient Hindus नामक ग्रन्थ के चतुर्थ अध्याय में लिखते हैं कि—

1—Every school boy in India prepares his own gunpowder.

अर्थात् भारत के प्रत्येक शालीय विद्यार्थी अपने बन्दूक की बारूद स्वयं बना लेते थे।

2—Explosive powder for discharging projectiles was known in India from the earliest period.

अर्थात् तोपों के लोगों को दूर तक फेकनेवाली बारूद बनाना भारतवासी लोग अत्यन्त प्राचीनकाल से जानते थे।

3—Gunpowder has been known in China as well as in India for beyond all period of investigation.

अर्थात् चीन और भारतवासी लोग बन्दूक की बारूद को कल्पनातीत प्राचीनकाल से जानते थे।

प्रोफेर गस्टाव और भी कहते हैं कि विपक्षी के विरुद्ध जिन-जिन अस्त्रों का प्रयोग किया जाता है, उनमें बारूद भरे गोलों का भी प्रयोग होता है ऐसा महर्षि वंशम्पायन अपने नीति-प्रकाशिक नामक ग्रन्थ में लिखते हैं। इन धूएँ के गोलों को संस्कृतमें धूम्रगोलक अथवा चूर्ण गोलक कहते हैं उन्हीं को अंग्रेजी भाषा में Smoke-balls कहते हैं।

पाश्चात्य विद्वानों के ग्रन्थों से उद्धृत किये हुए उपर्युक्त प्रमाणों से हमें आशा है कि हमारे आधुनिक विद्वानों को यह विश्वास करने में कोई प्रत्यवाय नहीं होगा कि वानरों को सुरंग लगाने, बारूद बनाने तथा उसका प्रयोग करने का यथेष्ट ज्ञान था। उनको मिलिटरी इनजीनिअरिंग का इतना ज्ञान था कि जो आधुनिक पाश्चात्य इन-जीनिअरों से कम नहीं कहा जा सकता।

वानरों के पास ध्वनिवाहक यन्त्र थे

लंका के चौगिर्द वानर सेना का जो घेरा पड़ा हुआ था, उसमें उत्तर द्वार पर रावण के मुकाबिले में श्री रामचन्द्र अपनी सेना समेत उपस्थित थे और पश्चिम द्वार पर इन्द्रजीत के मुकाबिले में हनूमानजी अपनी सेना सहित उपस्थित थे। इन दोनों राम और हनूमान के बीच का अन्तर कितना होगा, इसे वाल्मीकि के वर्णन के अनुसार दशयोजन विस्तीर्णा विंशतियोजन आयता अर्थात् दशयोजन=५० मी० चौड़ाई और २० योजन यानी १०० मीटर लम्बाई का विस्तार रावण की राजधानी लंका नगरी का था।

लंका नगरी की रक्षा के लिए अर्थात् श्री रामचन्द्र की सेना के आक्रमण से बचाने के लिये उत्तर द्वार के आगे पर्याप्त अन्तर पर रावण की लक्षावधि सेना खड़ी थी और सेना के सम्मुख लंका के प्राकार पर लगाई गई तोपों के बाहर (out of the renge of the enemy's guns) श्रीराम अपनी वानर सेना को लिये खड़े थे।

और उनके पृष्ठ भाग में समुद्र तक वानर सेना का फैलाव था। इसी तरह लंका के पश्चिम द्वार के आगे प्राकार के बाहर इन्द्रजित की लक्षावधि सेना खड़ी थी और उस सेना के सामने लंका के पश्चिमी प्राकार पर लगाई हुई तोपों की मार से बाहर हनुमान जी की सेना पीछे की

ओर कई मीलों तक फैली थी। दोनों सेनाओं के अगाड़ी (Front) से निकलती हुई सरल रेखाओं से बनाते हुए समकोण की जगह पर जाम्बवान को रखा था जिससे वे अपने दाहिने और बायें की ओर हनुमान और रामचन्द्र को यथासमय आवश्यकतानुसार सहायता पहुँचा सकें। उपर्युक्त सैन्य रचना का विचार करने पर मालूम होता है कि श्रीरामचन्द्र और रावण के बीच कितने ही मीलों का अन्तर होना सम्भव है। इसी प्रकार इन्द्रजित् और हनुमान के बीच में भी कई मीलों का अन्तर होना अनिवार्य है।

अब रावण और इन्द्रजित् के बीच का अन्तर लंका के उत्तर द्वार से लंका के पश्चिम द्वार तक, लंका के प्राकार के अन्दर से एक कर्ण रेखा खींची जाय तो गणित से ५६ मील होता है। अर्थात् रावण से कई मील के अन्तर पर खड़े हुए रामजी और इन्द्रजित् से कई मीलों पर खड़े हुए हनुमानजी दोनों के बीच का अन्तर ५६ मील से कई मील अधिक होगा।

अब महर्षि वाल्मीकिजी ने दोनों ओर की सैन्य संख्या का जो वर्णत दिया है, वह २०–२५ गुना अत्युक्तिपूर्ण भी मान लिया जाय तो भी श्रीरामचन्द्रजी और श्री हनुमानजी के बीच से, लंका के बाहरी युद्धक्षेत्र में ७५–८० मील का अन्तर हो सकता है।

इतने अन्तर पर से श्रीरामचन्द्रजी को इन्द्रजित् से लड़ती हुई हनुमानजी की सेना का निर्घोष और आयुध सुनाई दिया इत्यादि वर्णन पूर्वोक्त श्लोक ५ में है और इसी निर्घोष को सुनकर श्रीरामचन्द्र ने जामवान को जो श्रीरामजी से ७०–७२ मील दूर थे—तत्काल हनुमानजी की सहायता को सेना लेकर जाने की आज्ञा दी—३

सौम्यनूनं हनूमताकृतं कर्मसुदुष्करम्।
श्रूयतेच यथाभीमः सुमहान् आयुध स्वनः॥

तद्गच्छकुरुसाहाय्यं स्वबलेताभिसंवृतः ।
अगमत् पश्चिमं द्वारं हनूमान् यत्र वानरः ॥

इस वर्णन से स्पष्टतया प्रमाणित होता है कि तत्कालीन वानरों के पास दूर ध्वनि ग्राहक कोई यन्त्र अवश्य होगा ।

वानरों की स्त्रियों की महानता

वानर प्रकाण्ड विद्वान, बुद्धिमान, शूर, योद्धा, राजनीतिज्ञ भी थे तथा मानवीय उच्चगुणों से परिपूर्ण थे । वानर स्त्रियाँ भी उन्हीं के समकक्ष थीं । तनिक भी पिछड़ी न थीं क्योंकि पुरुषवर्ग स्त्रियों को पीछे ढकेल कर कभी आगे बढ़ा है न बढ़ सकता है । वानर-स्त्रियों की जानकारी हेतु पाठकगण तनिक तारा की ओर दृष्टिपात करें ।

सुषेणदुहिता चैषा अर्थसूक्ष्मविनिर्णये ।
औत्पातिके च विविधे सर्वतः परिनिष्ठिता ॥१३॥
एदेषा साध्विति ब्रूयात्कार्यं तन्मुक्तसंशयम् ।
नहि तारामतं किंचिदन्यथा परिवर्तते ॥१४॥

(किष्किन्धा काण्ड सर्ग २२)

हे सुग्रीव ! सुषेण की पुत्री तुम्हारे सम्मुख बैठी है । किस योग्यता की स्त्री है यह तुमको मालूम ही है । यह अत्यन्त सूक्ष्म और पेचीले राजकीय प्रश्नों का निर्णय करने में तथा अनेक राजनैतिक गुत्थियों को सुलझाकर राजतन्त्र को सुव्यवस्थित करने में अत्यन्त निपुण है । जिस कार्य में इसकी अनुमति होगी वह कार्य निसन्देह करते जाओ । उसमें कभी असफल नहीं होंगे ।

युद्धक्षेत्र में बाली के मारे जाने का समाचार सुन, तारा दौड़ती

हुई बाली के पास पहुँची। मन्त्रियों ने उसे लौट जाने तथा पुत्र अंगद की रक्षा करने तथा राजसिंहासन पर बैठाने के लिये प्रार्थना की। यह सुनकर तारा ने उत्तर दिया :—

पुत्रेण मम किं कार्यं राज्येनापि किमात्मना।
कपिसिंहे महाभागे तस्मिन् भर्तरि नश्यति ॥१८॥
पादमूलं गमिष्यामि तस्यैवाहं महात्मनः।
योऽसौ रामप्रयुक्तेन शरेण विनिपातितः ॥१९॥

(किष्किन्धा कांड सर्ग १९)

"महाभाग कपि श्रेष्ठ, मेरे पतिदेव मृत्युशय्या पर पड़े हुए हैं और मेरा सौभाग्य भी उन्हीं के साथ नष्ट हो रहा है। अब मुझे पुत्र से और राज्य से भी क्या प्रयोजन है? मेरे पतिदेव राम के बाण द्वारा रण में आहत हुए हैं। इसलिये इन्हीं के चरणों पर मैं अपना शरीर समर्पण कर दूँगी।" यह कहकर वह पछाड़ खा गिर पड़ी और तड़पने लगी। तब हनुमान ने उसे सान्त्वना देते हुए कहा—हे महारानी! जो होना था सो हो गया। अब शोक छोड़ कर आगे के लिये राज्य-व्यवस्था के योग्य आज्ञा दीजिये। युवराज अंगद समेत हम सब वानर वीर तथा यह सारा वानर राष्ट्र आपके अधीन है। पुत्र अंगद को सिंहासन पर अधिष्ठित देखकर आप सुखी होंगी और कालान्तर में शोक को भुला देंगी।" हनुमान के इस वक्तव्य पर तारा ने जो उत्तर दिया वह प्रत्येक आर्य-गृहणी को आस्थापूर्वक अपने हृदय के अन्तःकरण में अंकित कर लेने योग्य है। तारा ने कहा :—

अंगदप्रतिरूपाणां पुत्राणां एकतः शतम्।
हतस्याप्यस्य वीरस्य गात्रसंश्लेषणं वरम् ॥१३॥

पतिहीना तु या नारी कामं भवतु पुत्रिणी ।
धनधान्यसमृद्धाऽपि विधवेत्युच्यते बुधैः ॥१२॥

(सर्ग २३)

"अंगद के समान एक सौ ऐश्वर्यवान पुत्रों को साथ लेकर ऐश्वर्य भोगने की अपेक्षा इस वीर मृत पति के साथ सती हो जाना अति श्रेयस्कर है। क्योंकि पतिहीन स्त्री, यद्यपि पुत्रोंवाली भी हो, धन-धान्य से समृद्ध हो तथापि वह विधवा ही कही जाती है। उसे 'सुहागिन' कोई नहीं कहता।"

देखिये कितनी यह पतिनिष्ठा और कहाँ तक यह स्वार्थ-त्याग है। राजमाता का मान, सारे वानर-राष्ट्र का सर्वाधिकार सब मन्त्रियों की अनुकूलता, राजैश्वर्य और तज्जन्य सर्वसुखोपभोग इत्यादि मिलते हुए भी जो स्त्री लोभवश नहीं हुई तथा अपने जीवन को भी तृणवत् समझ कर जो साध्वी अपने मृतपति के साथ चिता पर आरूढ़ हो जाने को तैयार हो गई उसके त्याग, धैर्य तथा पति-प्रेम की जितनी प्रशंसा की जाय, उतनी ही थोड़ी है। क्या इस प्रकार की उच्चकोटि की महिला वन्य-पशु वानर में उत्पन्न होने की कभी भी सम्भावना हो सकती है? इसका केवल एक उत्तर है कि मनुष्य-समाज में ही सती साध्वी स्त्रियाँ पैदा हो सकती हैं।

जो वानर विद्या पढ़ सकते हों, यज्ञोपवीत धारण करते हों, संध्या करते हों, विशाल-भवनों में रहते हों, कपड़े तथा भूषण पहनते हों, दिग्गज राजनीतिज्ञों की सूझ को मात करनेवाले हों तथा जिनकी स्त्रियाँ किसी भी अभ्युदय के शिखर पर आरूढ़ मनुष्य को गौरवान्वित करने वाली हों, क्या वे वानर पशुजाति के नहीं हो सकते हैं?

सुग्रीव का राज्याभिषेक

रत्नैर्वस्त्रैश्च भक्ष्यैश्च तोषयित्वा द्विजर्षभान् ॥२९॥
मन्त्रपूतेन हविषा हुत्वा मन्त्रविदो जनाः ॥३०॥
प्रासाद शिखरे रम्ये चित्रमाल्योपशोभिते ॥३१॥
प्राङ्मुखं विधिवन्मन्त्रैः स्थापयित्वावरासने।
नदीनदेभ्यः संहृत्यतीर्थेभ्यश्च समन्ततः ॥३२॥
आहृत्य च समुद्रेभ्यः सर्वेभ्यो वानरर्षभाः।

रत्न, वस्त्र, भोजन द्वारा ब्राह्मणों को सन्तुष्ट किया गया, मन्त्रवेत्ता वद्वानों ने मन्त्रों द्वारा हवन किया। राजभवन में श्रेष्ठ आसन पर सुग्रीव बिठलाया गया तथा नदनदी समुद्र तथा पवित्र तीर्थों से लाये गये जल से उसका राज्याभिषेक किया गया।

उत्तम ब्राह्मणों ने यहाँ पर हवन किया दक्षिणा भी पाये, भोजन भी किया। आर्य राजाओं के अभिषेक समान सुग्रीव का राज्याभिषेक हुआ, फिर वे पूँछवाले पशु तो नहीं रहे, किन्तु मनुष्त थे उनकी जाति वानर थी। उनमें वेदों के बड़े-बड़े विद्वान् ब्राह्मण थे। कैसी उनकी वर्णव्यवस्था थी, पाठक इसपर ध्यान दें।

श्रीपाद दामोदर सातवलेकर के शब्दों में वानर वीर मानव ही थे। 'वानर' यह उनका जातीय उपनाम था। इस समय यूरोपियों के नाम भी ऐसे ही रक्खे गये हैं। रूसवालोंका नाम 'ह्वाइट बिअर' (श्वेतरीछ) है, फ्रान्सीसियों का नाम 'लायन' (सिंह) है, जर्मनवालों का नाम 'ईगल' (गरुड़) है, अंगरेजों का नाम 'बुल' (बैल) है। ये उपनाम इन देशवासियोंको किसी विशेष कारण से ही दिये गये होंगे। इन देशों में से किसी भी देश के लोग इन पशुओं जैसे शरीरवाले नहीं हैं। क्योंकि ये लोग हमारे सामने इस समय हैं और मानव-शरीरवाले ही ये लोग

हैं। यही और ऐसी ही बात वानरों की है। इसी तरह 'वानर' यह एक उपनाम इस जाति का था। वस्तुतः वानर मानवों की ही एक जाति थी।

यदि ऐसा है तो वानरों के मुख बन्दर जैसे क्यों दीखते हैं? और इनकी जो पूँछ है वह क्यों है? इसका उत्तर कठिन नहीं है। प्राचीन समय में कई जातियाँ अपने चेहरे पर किसी न किसी पशु पक्षी के कृत्रिम मुख लगा लेती थीं। इस समय भी हिमालय में कई जातियाँ ऐसी बनावटी मुख धारण करती हैं। इस समय वार्षिक नाच मेले में ही ये बनावटी मुख बर्ते जाते हैं। इस तरह वानरों के मुख बनावटी (Mask) मुख हैं और जो पूँछ दीखती है वह 'पाश' जो एक अस्त्र रस्सी जैसा इनके पास रहता था, उनका अन्तिम भाग है। शेष पाश का भाग कमर के चारों ओर लपेटा होता था।

किसी वीर का चित्र जो खींचते हैं, वह उनके अस्त्र-शस्त्रों के साथ तथा उसके वीर वेष के साथ ही खींचते हैं। उसके नंगे शरीर का चित्र कभी नहीं खींचा जाता। इस तरह वानरों के चित्र भी उनके शिरस्त्राण और पाश के साथ खींचे जाते हैं क्योंकि यही उनकी विशेषता है। इस समय यूरोपीय युद्ध में गैस मास्क (Gas-Mask) या 'हैमलेट' जब मुख पर चढ़ाते हैं तब मुख बन्दर जैसा सूँड़वाला दीखता है। ये गैस-मास्क इस समय प्रचलित हैं। इसी तरह वानर वीरों के शिरस्त्राण सहित मुख बन्दर जैसे दीखते तो कोई आश्चर्य नहीं है।

वानर वीर गदायुद्ध अथवा वृक्ष युद्ध में प्रवीण थे। शत्रु के शस्त्र के अघात से मुख का बचाव करने के लिये ये बनावटी मुख रहते थे। आघात से मुख, नाक और आँख के बचाव की व्यवस्था इसमें थी। इसलिये ये शिरस्त्राण बन्दर जैसे दीखते हैं।

वानरों की पूँछ यह पाश ही है। यह वानरों के शरीर का भाग

नहीं है। यदि यह शरीर का भाग दुम जैसा होता तो हनुमान के दुम में जब आग लगा दी गई तो उससे उनको कष्ट होता, पर वैसा कष्ट मारुति को नहीं हुआ। इससे स्पष्ट है कि हनुमान की दुम उसके शरीर का भाग न थी। हिमालय के मजदूर कमर में रस्सी लपेटते हैं। यह जैसे बोझ उठाने में सहायक होती है वैसे ही शत्रु को पकड़ने में भी काम आती है। यह एक प्रकार का पाश है। मरहठे वीरों के पास भी यह पाश रहता था, पर ये घोड़े के पिछाड़ी में इसे रखते थे।

वानरों का मुख तथा पूँछ का यह विचार है। वानरों का यही परिवेष (uniform) था और इसीलिये जब वानर सैन्य लंका में गया था उस समय राम ने ऐसी आज्ञा दी थी कि कोई वानर वीर मानवी वेष में युद्ध समाप्ति तक न रहें, वानरों के ही वेष में रहें।

> न चैव मानुषं रूपं कार्यं कपिभिराहवे।
> एषा भवतु नः संज्ञा युद्धेऽस्मिन् वानरे बले ॥३३॥
> वानरा एव वश्चिह्नं स्वजनेऽस्मिन् भविष्यति।
> वयं तु मानुषेणैव सप्त योत्स्यामहे परान् ॥३४॥
> अहमेव सहभ्रात्रा लक्ष्मणेन महोजसा।
> आत्मना पञ्चमश्चायं सखा मम विभीषण ! ॥३५॥
>
> (युद्धकांड सर्ग ३७)

इस युद्ध में वानर कभी मानवी वेष (uniform) न धारण करें। हमारे इस सैन्य का वेष (uniform) वानर वेष ही रहे। मैं स्वयं, लक्ष्मण और अपने चार मन्त्रियों सहित विभीषण ये साथ ही मनुष्य वेष में रहकर शत्रु से युद्ध करेंगे। यह स्थिर आज्ञा (Standing order) थी। जब तक युद्ध समाप्त न होगा तब तक यह आज्ञा जारी रहनेवाली थी। इससे स्पष्ट है कि मनुष्य, वानर और राक्षस के वेष ही

अलग-अलग थे; उनके शरीर समान अर्थात् मानवी शरीर थे। नहीं तो विभीषण मानव वेष से रहेंगे इसका और क्या अर्थ हो सकता है? सैनिकों की पहचान वेष (unifcrm) से होती है। इसलिये कौन किस वेष में रहे इसकी स्थिर आज्ञा (Standing order) इस तरह दी गई थी। वाल्मीकि ने यहाँ पर सब पर्दा खोल दिया है।

वानर जाति का बन्दरों जैसा वेष था। हनुमान जब राम लक्ष्मण से मिलने के लिये ऋष्यमूक पर्वत से नीचे उतरे तब उन्होंने तपस्वी का वेष (uniform) धारण किया।

कपिरूपं परित्यज्य हनुमान्महात्मजः।
भिक्षुरूपं ततो भेजे शठबुद्धितया कपिः ॥१॥

(किष्किन्धा कांड, सर्ग २)

राम लक्ष्मण के पास जाने के समय हनुमान ने वानर वेष निकाल दिया और भिक्षु वेष का रूप धारण कर लिया। मैं कौन हूँ इसका पता राम लक्ष्मण को न लगे इसलिये हनुमान ने ऐसा किया। इससे यह सिद्ध होता है कि यह एक प्रकार का वेष हुआ करता था। राम लक्ष्मण से भेंट करके जब वह सुग्रीव के पास पुनः लौटा तो उसने भिक्षुरूप छोड़कर वानररूप धारण कर लिया। इससे यह सिद्ध होता है कि यह वेष है।

भिक्षुरूपं परित्यज बानरं रूपमाश्रितः ॥३३॥

भिक्षुरूप छोड़कर हनुमान ने पुनः बानर रूप धारण कर लिया।

अतः रामायण में वर्णित वानर पशु-शरीरधारी वानर नहीं थे किन्तु मानव-शरीरधारी मनुष्य थे।

जब राम ने बाली को मारा तब उसने राम पर बहुत दोषारोपण किया, यहाँ तक उन्हें कहा कि मैं दूसरों से युद्ध करने में व्यस्थ था, तब

गुप्त रूप से वध करके तुम्हें क्या मिला। तू इस प्रकार अधर्म न करेगा, ऐसे तुझे देखने से पूर्व लगता था। तू धर्म की डींग हाकता है, पर तू तो पूरा पापी है। धरती पर तुझे धार्मिक कहा जाता है वह सब असत्य है। तू तो सर्वथा कपटी और क्रूर है तुझे उचित समय पर राज्य मिलने पर प्रजाजन मेरे वध के विषय में यदि तुझसे प्रश्न करें तो उन्हें क्या उत्तर दिया जाय, इसे तू अभी से सोचकर तैयार रह। श्लोक १७ २० २१ २३

इसका उत्तर राम ने दिया—

अनुज वधू भगिनी सुत नारी, सुन शठ ये कन्या समचारी।
इन्हें कुदृष्टि बिलोके जोई, ताहि वधे कछु पाप न होई॥

पाठकों आप विचार करें कि ये उक्त कथन मनुष्यों के लिये है, या पशुओं के लिये? मानना पड़ेगा कि यह कथन पशुओं पर नहीं घटता किन्तु मनुष्यों पर घटता है। अतः सुग्रीव बाली आदि मनुष्य थे। उनकी संज्ञा वानर थी।

कृष्ण की पत्नी जाम्बवती क्या भालुनी थी? क्या भालुनी के साथ कृष्ण का विवाह हुआ था? इस विषय में कितना अन्धकार इन हिन्दुओं में फैला हुआ है। राँची जिले में उराँव औ मुण्डानाम की दो जातियाँ हैं जो ईसाई हो गई हैं। सैंट पालहाई स्कूल में मैं हेडपण्डित था। उनको पढ़ाता था एक बार गोत्र की बात उठ गई। मैंने पूछा तुम्हारा गोत्र क्या है? उनमें से कुछ छात्रों ने अपने को बानर गोत्र और कुछ ने भालू गोत्र बताया। ये जंगली जातियाँ हैं, गोत्रादि बानर भालू के हैं परन्तु हैं आदमी। ये लोग उन्हीं वानर और भल्लूक जाति के वंशज हैं। ऐसा अनुमान लगाना कोई अनुचित नहीं। अन्यथा बानर भालू गोत्र का उत्तर ही क्या हो सकता है। जिसका विशद वर्णन पिछले लेख में है अब हनुमान जी की जन्म कथा सुनिये—

हनूमान जन्म कथा

हनूमान जन्म कथा भिन्न-भिन्न पुराणों में भिन्न-भिन्न प्रकार की पाई जाती है, पर इस विषय में सबही एक मत हैं कि हनूमान के पिता केसरी और माता अंजनी थी। किसी भी प्राणी का जन्म एकही बाप द्वारा एकही माता के गर्भ से देखी जाती हैं परन्तु यहाँ इसके विपरीत केसरी और अंजनी के सिवाय, महादेव पार्वती तथा वायु के पुत्र थी कहे गये हैं—अर्थात् ३ बाप से हनुमान जी पैदा हुए, क्या यह माननीय हैं? पुराण ने बड़ा ही अनर्थ संसार में फैलाया है मिथ्या कथा लिख कर हनूमान को कहीं का न छोड़ा। शिव पुराण शतरुद्रसंहिता के अ० २० में कथा इस प्रकार है—

एकबार शिव ने विष्णु के मोहिनीरूप को देखा उस रूप ने शंकर को क्षुब्ध कर दिया। काम बाण से पीड़ित शंकर ने, राम के कार्य के लिये अपने अपने वीर्य को स्वयं गिरा दिया। सप्तर्षियों ने उस बीर्य को एक पत्ते पर रख लिया। सप्तऋषियों ने उस वीर्य को गौतम की कन्या अंजनी के कान में डाल दिया। उससे हनूमान नाम से स्वयं शंकर वानर रूप में उत्पन्न हुए। वे सूर्य बिम्ब को निगल गये। देवों की प्रार्थना से सूर्य को महा बलवान जानकर छोड़ दिया। देवताओं ने वर दिया शिव के अवतार माने गये।

आख्यायिकार शैवों ने हनूमान को शिवावतार सिद्ध करने के लिये यह उक्त आख्यायिका लिखी, जो सर्वथा अश्लील सृष्टिक्रम विरुद्ध अज्ञानमूलक है।

विष्णु ने मोहिनी रूप कब धारण किया। क्यों किया इसे जाने बिना इस गप्प का भेद न खुलेगा इसलिये पहले कथा सुनिये :—

भस्मासुर के तप से शंकर प्रसन्न हुए और वर माँगने को कहा। भस्मासुर पार्वती रूप देखकर मोहित हो गया था। उसने सोचा कि ऐसा

वर मागूँ कि शिव को मार कर पार्वती को हस्तगत कर लूँ। उसने वर माँगा कि मैं जिसके सर पर हाथ रखूँ, वह भस्म हो जाय। शिव ने उसे वर दे दिया। वह उन्हीं को भस्म करने के लिये उनके पीछे दौड़ा। शिव भाग खड़े हुये, भागते-भागते बेचारे परेशान हो गये। विष्णु शंकर की रक्षा के लिये पार्वती का रूप धारण कर भस्मासुर के सामने खड़े हो गये और बोले कि तुम शिव को छोड़ो, मैं तुमसे राजी हूँ। परन्तु शिव जी हमारे सामने एक हाथ सिर पर और एक हाथ नितम्ब पर रखकर नाचते थे तो मैं बड़ी प्रसन्न होती थी, तुम भी वैसे ही नाचो, मैं तुम्हारे साथ चलूँगी। काम मोहित ज्योंही सिर पर हाथ रखा, जल कर राख हो गया।

अब विचारणीय विषय यहाँ यही है कि जब पार्वती शिव की पत्नी थी तो उसे देखकर शिव का वीर्य क्यों स्खलित हो गया, क्या संसार में कभी ऐसा देखा जाता है कि पत्नी को देखकर ही वीर्य स्खलित हो जाय ? यह कवि का मनमोदक है, ख्याली पोलाव है।

हनूमान को शिव का अवतार सिद्ध करने के लिये कथा गढ़ी गई है, इसीलिये शिव ने स्वयं अपना वीर्य अपनी इच्छा से गिरा दिया, न कि वीर्य पार्वती के रूप के कारण स्खलित हुआ। जब वीर्य गिरा तो उसी समय सप्तर्षि कहाँ से आ गये और पत्ते पर लेकर उसे सुरक्षित रखा। यह भी महा गप्प है सप्तर्षि कौन हैं, पुराणकार ने नहीं लिखा, नहीं तो पोल खुल जाती, उत्तर दिशा में सप्तर्षि मण्डल है, जो बराबर ध्रुव के चारों ओर घूमते दिखलाई देता है, दूसरा सप्तर्षि इसी शरीर में दो आँख दो कान दो नाक एक जीभ है इस तरह सप्त ऋषि हैं— "सप्त ऋषयः प्रति निहिता शरीरे" यह वेद मन्त्र है। इस कथाकार से पूछना चाहिये कि इनमें से कौन आये थे ? सौ जन्म में भी शैव लोग इसका उत्तर नहीं दे सकते। अतः जब सप्तर्षियों का कथन ही सर्वथा

मिथ्या सिद्ध हो गया तब पत्ते पर वीर्य का सुरक्षित रखना और अंजनी के कान में डालना तो स्वयं ही असिद्ध हो गया। पुनश्चच कान में वीर्य डालने से सन्तान कैसे होगी, यह तो गप्पों का दादा है।

अतः शिव पुराण की सारी कथा असम्भव सृष्टि क्रम विरुद्ध होने से इस वीसवीं शताब्दी में कोई भी बुद्धिमान मान नहीं सकता। अतः निष्कर्ष यह निकला कि हनूमान न तो शंकर के अवतार थे, न शिव के वीर्य भवानी में पैदा हुए थे, बल्कि केसरी के क्षेत्रज पुत्र थे।

अब रह गया वायु नन्दन, इसपर कवि की कल्पना देखिये। भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पर्व अ० १३ में हनूमान की उत्पत्ति के विषय में लिखा है :—

अंजना गौतम की कन्या थी। रुद्र का तेज केसरी के मुख में चला गया। वह कामातुर हो अंजनी से बलात्कार करने लगा। इसी बीच में वायु ने केसरी के शरीर में प्रवेश किया और वे अंजना से बलात् १२ वर्ष तक मैथुन करते रहे। इससे रुद्र (हनूमान) बानर रूप उत्पन्न हुए। माता से कुरूप देखकर उसे फेंक दिया। वे बलात् सूर्य को निगल गये। इन्द्र देव ने वज्र मारा तब भी सूर्य को न छोड़ा। तब सूर्य त्राहि-त्राहि पुकारने लगे। सूर्य के दीन वचन को सुनकर रावण ने उनका पूँछ पकड़ कर खींचा। सूर्य को छोड़कर रावण से घोर युद्ध किया। रावण भाग गया बाद में पम्पा सर पर निवास करने लगे। समीक्षा—शिव पुराण की कथा से भविष्य पुराण की कथा एकदम भिन्न है। दोनों में सही कौन है। उत्पत्ति तो एक ही प्रकार की होनी चाहिये।

अतः यह पुराण लीला है। वास्तव में दोनों कथायें काल्पनिक

मिथ्या है। प्रथम की कल्पनिकता तर्क-वितर्क द्वारा गत लेख में मैंने दिखला दी है, अब इसकी कल्पनिकता भी देखिये :

इस कथा से यह बात तो सिद्ध है कि अंजना मनुष्य कन्या थी, अतः केसरी भी मनुष्य ही था (आजकल के समान वानर पशु न था) ऐसी दशा में हनूमान जी पूँछवाले वानर पशु नहीं थे किन्तु मनुष्य थे।

गत कथा में तो शिव वीर्य अंजना के कान में डाला गया, पर इस कथा में केसरी के मुख में; कल्पना मिथ्या है न ? जैसे कान में वीर्य डालना असत्य सिद्ध किया गया है उसी प्रकार मुँह में वीर्य डालना भी मिथ्या ही है क्योंकि जब सप्तर्षि ही कोई नहीं था, तो वीर्य का पतन और दोने में लेकर सुरक्षित रखना और मुँह में डालना ये दोनों बातें स्वयं मिथ्या सिद्ध हो जाती हैं। और प्रमाण की आवश्यकता ही क्या रही ? दोनों में सत्य कौन ? फिर बारह वर्ष तक केसरी भोग करता ही रह गया, क्या यह सम्भव है ? इसे तो पौराणिक ही बतलावेंगे कि यह महा घोटाला क्यों ? संसार में न कभी हुआ, न होगा और न हो सकता है। सृष्टि नियम विरुद्ध बातें कालत्रय में मिथ्या होती हैं।

सारांश यह निकला कि हनूमान'जी न शंकर पार्वती के पुत्र थे, और न इस कथा के अनुसार वायु के पुत्र थे, तर्क की कसौटी पर कसने से उक्त दोनों कथायें मिथ्या सिद्ध हो जाती हैं।

हनूमानजी का पैदा होते ही सूर्य का निगलना भी गप्पों का सिर-ताज है। कहाँ सूर्य पृथिवी से तेरह लाख गुना बड़ा और ९ करोड़ मील पृथिवी से दूर और कहाँ महावीर क्षुद्र शरीर बालक नार के साथ। कैसी असम्भव कथा रची गई है।

फिर सूर्य के पास रावण कहाँ से, क्यों कूद पड़ा यह भी मिथ्या कल्पना मात्र है। सूर्य तो आग का गोला है, वहाँ जाना ही असम्भव है उसका निगलना तो दर किनार। यह तो कवि की कल्पना का उड़ान

है। न कि हनूमान के उड़ान का, एक बात और है, हनूमान और रावण की लड़ाई हुई कहाँ पर, लड़ने के लिये शरीर का आधार चाहिये, क्या वहाँ पर उनको परस्पर लड़ने के लिए भूमि थी ? या पुराण बनाने वाले की छाती पर लड़े। यह सब कवि की कल्पना है। ऐतिहासिक सत्यता इसमें लेशमात्र भी नहीं है।

हनूमान नाम क्यों पड़ा। इस पर भी लाल बुझक्कड़ों ने एक कथा गढ़ डाली। जब हनूमान जी पैदा हुए तो सूर्य को एक फल समझ कर उसको लेने के लिये उछल पड़े, यह विपत्ति देख कर इन्द्र ने वज्र मारा जिससे उनकी बाँयी ठुड्डी टूट गई इसी से इनका नाम हनूमान पड़ा।

यही कथा युद्धकाण्ड में देखिये, यहाँ न सूर्य के निकलने का वर्णन है, न इन्द्र के मारने का।

अर्थात् हनूमानजी वायु के वीर्य से केसरी की स्त्री अंजना में उत्पन्न होने के कारण वायु के औरसपुत्र और केसरी के क्षेत्रज पुत्र कहे जाते हैं।

उद्यन्तं भास्करं दृष्ट्वा बालःकिल बुभुक्षितः।
त्रियोजन शहस्रं तु अध्वानं अवतीर्यं हि ॥
आदित्यमाहरिष्यामि नमे क्षुत्प्रतियास्यति।
इति निश्चित्य मनसा पुप्लुवे वलदर्पितः ॥
अनाधृष्यतमं देवमपि देवर्षिराक्षसैः।
अनासद्यैव पतितो भास्करोदयने गिरौ ॥
पतितस्य कपेरस्य हनुरेका शिलातले।
किञ्चिद्भिन्ना दृढहनु र्हनूमानेष तेन वै ॥

१२, १३, १४, १५ युद्धकाण्ड सर्ग २८

यह वानर श्रेष्ठ यथेच्छरूपधारी बलरूपयुक्त है यह जब बालक ही था प्रातः उदित सूर्य को देखकर तीन हजार योजन ऊपर को कूद गया जो सूर्य देवों और राक्षसों से तिरस्कृत नहीं हो सकता उसे न पकड़ पाया और उदयगिरि पर गिर गया। गिरने से इसकी ठुड्डी कुछ टूट गयी इसी से हनूमान नाम पड़ा।

वायु देव बड़े रुष्ट हो गये। वायु का बहना बन्द हो गया। सब देवों ने प्रार्थना की तो वायु देव प्रसन्न हुए और ब्रह्मा ने हनूमान को शस्त्रों से अवध्य होने का वर दिया और इन्द्र ने अमरत्व का वर दिया वायु जल के समान जड़ है, वह रुष्ट कैसे होगा फिर वायु का हनूमान से क्या सम्बन्ध था, वह तो सबके लिए जलवत् समान है। वह बन्द क्यों हो गया इसी जड़ वायु का पुत्र हनूमान को बताया गया है जो सर्वथा गप्प है। पुराणों ने बड़ी उड़ान मारी है। गप्प मारने में तो पुराण सबके अग्रणी हैं।

अमरत्व की बात भी सर्वथा काल्पनिक और मिथ्या है।

कोई भी देव किसी को ऐसा वर नहीं दे ककता देखिये देवी भागवत पंचम स्कन्ध अ० २१। शुम्भ निशुम्भ ने ब्रह्मा से अमरत्व का वर माँगा तो ब्रह्मा ने कहा—

किमिदं प्रार्थनीयं वो विपरीतं तु सर्वदा।
अदेयं सर्वथा सर्वैः सर्वेभ्यो भुवनत्रये॥
जातस्य हि ध्रुवंमृत्यु ध्रुवंजन्ममृतस्य च।
मर्यादा विहितालोके पूर्वं विश्वकृताकिल॥
मर्तव्यं सर्वदा सर्वैः प्राणिभिर्नात्रसंशयः।
अन्यं प्रार्थयतां कामं ददामि यच्च वाञ्छितम्॥

तुम जो अमरत्व माग रहे हो, वह तो सर्वथा अदेय है। कोई किसी को अमरत्व नहीं दे सकता। जिसका जन्म होगा वह मरेगा,

और जो मरेगा वह फिर जन्म लेगा। सृष्टि कर्ता ने यह मर्यादा बाँध दी है इसलिए अमरत्व छोड़ कर जो चाहो माग लो।

अतः उक्त कथा भी सर्वथा ख्याली पोलाव है। यहाँ पर सूर्य के निगलने की बात नहीं है, निगलने के पहले ही मार गिराये गये थे। इस तरह सभी कथाओं में भिन्नता है। वायु तो जड़ है, उसका रुष्ट होना, प्रसन्न होना बन ही नहीं सकता यह तो कवि की कल्पना है। इस कथा में भी इतिहास भाग कुछ नहीं, कवि का मन मोदक है।

महाभारत में भी भीमसेन और हनूमान की मुठभेड़ की बात लिखी है वह तो ऐतिहासिक दृष्टि से सर्वथा असंभव है। त्रेता में हुये हनूमान और अन्तिम द्वापर में हुए भीमसेन। दोनों में प्रायः १२९६००० वर्ष का अन्तर है। हाँ, यदि यह मान लिया जावे कि रामायण और महाभारत काल में ४।५ सौ वर्ष का अन्तर है तो यह ऐतिहासिक दृष्टि से माननीय हो सकता है। अन्यथा महाभारत की कथा सर्वथा अमाननीय ही माननी पड़ेगी।

जामवान हनूमान से ही कहते हैं

किष्किन्दा काण्ड सर्ग ६६ में हनुमान के जन्म की कथा—

> अप्सराप्सरसांश्रेष्टा विख्याता पुञ्जिकस्थला।
> अञ्जनेति परिख्याता पत्नी केसरिणो हरेः ॥८॥
> विख्याता त्रिषु लोकेषु रूपेणाप्रतिमाभुवि।
> अभिशापादभूत्तात कपित्वे कामरूपिणी ॥९॥
> दुहिता वनरेन्द्रस्य कुञ्जरस्य महात्मनः।
> मानुषं विग्रहं कृत्वा रूपयौपन शालिनी ॥१०॥
> पिचित्रमाल्याभरणा कदाचित्क्षौमधारिणी।
> अचरत्पर्वतस्याग्रे प्रावृडम्बुदसंन्निभे ॥११॥

अर्थ—अप्सराओं में श्रेष्ठ पुञ्जिस्थला नामक अप्सरा केसरी नामक वानर की स्त्री समस्त लोगों में प्रसिद्ध है। अतिरूपावली किन्तु इसी शाप के वश कामरूपिणी वानरी हुई। वानरों में उत्तम महात्मा कुञ्जर की पुत्री है। वह सुन्दर अङ्ग वाली रूप और यौवन से युक्त, विचित्र माला और आभूषण धारण किये हुए, अच्छे वस्त्र पहने हुए, वर्षा ऋतु के मेघ के समान पर्वत के अग्रभाग पर विचरती थी।

पर्वत के अग्रभाग पर बैठी हुई उसके वस्त्रों को वायु ने सहज से उड़ा दिये। उस वायु नें उसकी गोल और अतिसघन जंघायें स्थूल स्तन और सुन्दरी मुख को देखा। देखते ही वायु कामातुर हो गया उसने अपनी दोनों विशाल भुजाओं से पकड़ लिया, उसके सम्पूर्ण शरीर में काम व्याप्त हो गया था और वेहोश था वह। अंजना घबड़ाई हुई रोने लगी कि हमारे इस एक पत्नीव्रत को नाश करने के लिये कौन इच्छा करता है। अंधना की बात सुनकर वायु नें कहा। हे सुभगे,! तू मत डर मैं तेरी हिंसा नहीं करूँगा, तुझे महान् विक्रमी, लाँघने और तैरने में मेरे समान पुत्र होगा। हे महाकपे, इस तरह कही गई प्रसन्न मनवाली तेरी माता ने एक गुफा में जाकर तुझे जन्म दिया। तू बालक उस महावन उदय हुए सूर्य को देखकर फल समझ कर, उसको लेने की इच्छा से उछल कर आकाश में चला गया। तीन सौ योजन जाकर गिरते हुए तुझे इन्द्र ने वज्र मारा इससे तेरी बाँई टोढ़ी टूट गई जिससे तेरा नाम हनुमान हुआ।

यदि यह कथा ज्यों की त्यों सत्य मान ली जाती है तो ऐतिहासिक दृष्टि से पनुमान का जन्म संदिग्ध ही रह जाता है। वायु जड़ है, सर्वत्र गामी है। पंचभूतों में एक भूत है। पंचभूत जड़ ही होते हैं, ये प्रकृति के विकार हैं, न तो वह स्त्रियों के सुन्दर रूप को देखकर मनुष्यवत् कामी बन सकता है और न किसी से भोग कर सकता है।

आजकल एक से एक अंजना से बढ़कर उन्नतकुचा पृथुवजधवा नारियाँ देखी जाती हैं, वर वायु क्यों नहीं कामातुर होकर पकड़ता है उन्हें मनुष्यवत् पकड़ कर भोग क्यों नहीं करता ? पर ऐसा न सुना गया न देखा गया। कथा आलंकारिक है। अब इसलिये माना पड़ेगा कि वायु नाम का कोई पुरुष था जिसने अंजना के सौंदर्य पर मुग्ध होकर उसके साथ भोग किया और हनुमान जी पैदा हुए। इन्हें क्षेत्रज कह सकते हैं।

सत्वं केसरिणः तुत्रः क्षेत्रजो भीमविक्रयः। ६६-२८

नियोग से उत्पन्न पुत्र क्षेत्रज कहलाते हैं इसीलिये हनुमान केसरी के क्षेत्रज पुत्र हैं जैसा कि रामायण में स्पष्ट लिखा हुआ है।

सत्वं केसरिणः पुत्रः क्षेत्रज्ञो भीमविक्रमः।
मारुतस्यौरसः पुत्रः तेजसाचापि तत्समः॥

हम पुराण, महाभारत, रामायण आदि सभी ग्रन्थों को मानते हैं संस्कृत साहित्य में रत्न भरे पड़े हैं उनको खोज निकालना विद्वानों का काम है परन्तु उनमें जो सृष्टि नियम विरुद्ध, बुद्धिवाद विपरीत अनेक आख्यायिकायें समय-समय पर मिलाई गई हैं जिससे भारत का नाम महाभारत पड़ गया। इसी प्रकार अन्य ग्रन्थों की बात समझ लीजिये। पुराणों की हनुमत्सम्बन्धी सभी कथाओं की तर्क पूर्वक समालोचना करके यह दिखला दिया गया कि हनुमान जी केसरी के क्षेत्रज पुत्र थे।

हनुमान चालीसा किसी अज्ञानी का बनाया हुआ है, जिसने हनूमान जी को शंकर और पार्वती का पुत्र लिख मारा जिससे सर्वत्र मिथ्या प्रचार हो गया। सबहो एकही माँ-बाप से पैदा होता है फिर हनूमान के तीन बाप मानना हनुमद्भक्तों की अज्ञानता और नासमझी है। अब तो एक दूसरी सच्ची हनुमान चालीसा लिखनी चाहिये।

अहल्या और गौतम

गणेश पुराण आनन्द रामायण तुलसीकृत रामायण में यह कथा एक समान है। इन्द्र अहल्या के साथ व्यभिचार करते हैं। जब गौतम को मालूम हो जाता है तो गौतम अहल्या को पत्थर हो जाने और इन्द्र को सहस्र भग हो जाने का शाप देते हैं। अहल्या पत्थर हो जाती है और रामचन्द्र के चरणरज के स्पर्श से फिर स्त्री बन जाती है, और इन्द्र जब राम को देखते हैं तो सहस्र भग के स्थान में सहस्र नेत्र उन्हें हो जाते हैं।

परन्तु प्रश्न यह है कि तुलसीदास को यह पता कैसे लगा क्यों लिखा। इस कथा का आधार तो बाल्मीकीय रामायण है अतः देखना चाहिये कि बाल्मीकीय रामायण में क्या लिखा है।

अहल्या की कथा

प्रजापति ने सौन्दर्य की प्रतीक-सी एक बालिका की रचना की। नामकरण हुआ अहल्या। उसका पालन-पोषण करने के निमित्त प्रजापति ने उसे गौतम-ऋषि को दे दिया। ऋषि ने उसका विधिवत् लालन-पालन किया। विवाह योग्य तरुणावस्था प्राप्त होने पर गौतम-ऋषि ने उसे प्रजापति को वापस कर दिया। उस अनुपमेय अनिन्द्य त्रिभुवन सुन्दरी को देखकर इन्द्र उसपर कामासक्त हो गये और उन्होंने प्रजापति से अहल्या को अपनी भार्या बनाने के लिए माँगा किन्तु प्रजापति इसपर तैयार नहीं हुए। बहुत दिनों तक जिस लावण्यमयी तरुणाङ्गी बाला अहल्या के सतत सम्पर्क में रहने पर भी उसके प्रति गौतम-ऋषि विषयासक्त न हुए उस कोमलाङ्गी कामिनी को गौतम-ऋषि को ही भार्या के रूप में देना निश्चय कर प्रजापति ने उन्हें समर्पण कर दिया। आश्रम में वे जीवन-यापन करने लगे।

एक दिन गौतम-ऋषि को आश्रम से बाहर गया हुआ जानकर देवराज इन्द्र, गौतम का भेष धारण कर उनके आश्रम में अहिल्या के पास पहुँचा और उससे सम्भोग करने के लिये अनुनय विनय करते हुए कहा :—

हे सुसमाहिते अहल्या! भोगार्थी मनुष्य ऋतुकाल की प्रतिज्ञा नहीं करते। अतः हे सुमध्यमे! मैं तेरे साथ समागम करना चाहता हूँ। तरुणी अहल्या का मन डोलायमान हो गया। इन्द्र की ओर वह आकर्षित हो गई।

मुनिवेषं सहस्राक्षं विज्ञाय रघुनन्दन।
मतिं चकार दुर्मेधा देवराज कुतूहलात् ॥१६॥
अथाब्रवीत् सुरश्रेष्ठं कृतार्थेनान्तरात्मना।
कृतार्थास्मि सुरश्रेष्ठ गच्छ शीघ्रमितः प्रभो ॥२०॥
आत्मानां मां च देवेश सर्वथा रक्ष गौतमात्।
इन्द्रस्तु प्रहसन् वाक्यमहल्यामिदम ब्रवीत ॥२१॥
सुश्रोणि परितुष्टोऽस्मि गमिष्यामि यथागतम्।
एवं संगम्य तु तदा निश्चक्रामोटजात् ततः ॥२२॥
स संभयात् त्वरन् राम शंकितो गौतमं प्रति।
गौतमं स ददर्शाथ विशन्तं तं महामुनिम् ॥२३॥

(वाल्मीकि-रामायण बालकाण्ड सर्ग ४८)

दुष्ट बुद्धिवाली अहल्या ने मुनिवेषधारी इन्द्र को पहचान लिया और उनके साथ रमण के लिये विचार कर सम्भोग किया। इसके पश्चात् प्रफुल्लित मन से उसने इन्द्र से कहा—"हे सुरश्रेष्ठ! मैं अब कृतार्थ हो गई। हे प्रभो! शीघ्र ही यहाँ से चले जाओ। हे देवेश! अपनी तथा मेरी सब तरह रक्षा करो।" इन्द्र ने हँसकर अहल्या से कहा—"हे

सुश्रोणि ! मैं भी सन्तुष्ट हो गया, मैं जैसे आया था वैसे ही चला जाऊँगा।" इस प्रकार अहल्या के साथ समागम करके गौतम के भय से सशंकित इन्द्र आश्रम से बाहर निकला। उधर गौतम मुनि आ पहुँचे और इन्द्र को बाहर आते देख लिया।

मम रूपं समास्थाय कृतवानसि दुर्मते।
अकर्तव्यमिदं यस्याद् विफललत्वं भविष्यति ॥२६॥

(बा० रा० बालकाण्ड सर्ग ४८)

हे दुर्बुद्धि इन्द्र ! जिस कारण मेरा रूप धारण कर तूने अयोग्य कर्म किया है इसके बाद फिर तू विफल होगा अर्थात् तेरे अण्डकोष गिर जायेंगे।

इन्द्र का अण्डकोष गिर पड़ा और वह लज्जित होकर मुँह नीचे किये हुए वहाँ से भाग गया।

उधर थर-थर काँपती हुई अहल्याको गौतमऋषि ने शाप दिया :-

इह वर्ष सहस्राणि बहूनि निवसिष्यसि ॥३०॥
वात भक्षा निराहारा तपन्ती भस्मशायिनी।
अदृश्या सर्वभूतानां आश्रमेऽस्मिन् वसिष्यसि ॥३१॥
यदा त्वेतद्वनं घोरं रामो दशरथात्मजः।
आगमिष्यति दुर्धर्षः तदा पूता भविष्यसि ॥३२॥
तस्यातिथ्येन दुर्वृत्ते लोभमोहविवर्जिता।
मत्सकाशं मुदा युक्ता स्वं वपुर्धारयिष्यसि ॥३३॥

(वा० रा० बालकाण्ड सर्ग ४८)

हे अहल्ये ! यहाँ ही तू अनेक वर्ष रह। निराहार (उपवास करती हुई), वात भक्षण (प्राणायाम) करती हुई तप करती रह ! भस्म में

सो जा (अर्थात् सुन्दर कपड़े न ओढ़ती हुई सो जा)। अपने इस आश्रम में ही रह, बाहर न जाना, किसी की दृष्टि में न रह (अर्थात् तुम्हें कोई देख न सके), इस ढंग से एकान्त सेवन कर। जब राम यहाँ आवेंगे और तुम्हारा आतिथ्य स्वीकार कर लेंगे तब तेरी पवित्रता होगी। तब तक तू अपने को लोभ और मोह में न फँसाना। इस रीति से रहकर जब तू तप करेगी तब तू फिर मेरे पास रहने योग्य बन जायेगी।

राम-लक्ष्मण को साथ लिये हुए विश्वामित्र जनकपुर जा रहे थे। मार्ग में गौतमऋषि का वह आश्रम आ पड़ा जहाँ बहुत दिनों से अहल्या तप में थी। शान्त और मनोरम किन्तु निर्जन आश्रम को देखकर राम को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। उन्होंने इसके विषय में गुरु से जिज्ञासा प्रकट की। विश्वामित्र ने अहल्या का इत्थंभूतवृत्त कह डाला। फिर :—

विश्वामित्र वचः श्रुत्वा राघवः सह लक्ष्मणः।
विश्वामित्रं पुरस्कृत्य आश्रमं प्रविवेश ह ॥१२॥
ददर्श च महाभागां तपसा द्योतित प्रभाम्।
लोकैरपि समागम्य दुर्निरीक्ष्यां सुरासुरैः ॥१३॥
राघवौ तु तदा तस्याः पादौ जगृहतुर्मुदा।
स्मरन्ती गौतम वचः प्रति जग्राह सा हितौ ॥१७॥
पाद्यमर्घ्यं तथातिथ्यं चकार सुसमाहिता।
प्रति जग्राह काकुत्स्थो विधि दृष्टेन कर्मणा ॥१८॥
साधु साध्विति देवस्तां अहल्यां समपूजयन्।
तपोबल विशुद्धांगी गौतमस्य वशानुगाम् ॥२०॥

गौतमोऽपि महातेजा अहल्या सहितः सुखी ।
रामं सम्पूज्य विधिवत् तपस्तेपे महातपाः ॥२१॥

विश्वामित्र ने राम-लक्ष्मण के साथ आश्रम में प्रवेश किया। वहीं पर उन्होंने तप के तेज से देदीप्यमान अहल्या को देखा। उस समय तक वह आश्रम से बाहर नहीं आयी थी। राम-लक्ष्मण ने उसके पावों पर मस्तक रख कर प्रणाम किया। तदनन्तर गौतमऋषि का वचन याद कर अहल्या ने राम-लक्ष्मण का आतिथ्य स्वीकार किया अर्थात् पाँव धोने के लिये पानी, आचमन के लिये जल तथा यथायोग्य अन्य आतिथ्य क्रिया। राजकुमारो ने उसे स्वीकार किया। इस पर देवताओं ने, "बहुत अच्छा, बहुत अच्छा" कहा। तप से शुद्ध बनी अहल्या को गौतमऋषि ने स्वीकार किया। दोनों बहुत ही सुखी हुए। फिर गौतम-ऋषि ने भी राम-लक्ष्मण का विधिवत स्वागत-सत्कार किया और पश्चात् महा तप करने के लिये चले गये।

पाठकगण विचारपूर्वक देखें कि जब राम-लक्ष्मण गौतमऋषि के आश्रम में घुसे उस समय उन्होंने अहल्या को तप-तेज से चमकते देखा। राम-लक्ष्मण ने उसके पैरों पर झुक कर प्रणाम किया तथा तत्काल ही अहल्या ने उनका आतिथ्य किया। यह सब काम तत्काल हुए। यहाँ राम के पदस्पर्श से शिलासे स्त्री (अहल्या) बनने का कुछ भी निर्देश नहीं है। अर्थात् वाल्मीकि को अहल्या के पत्थर बन जाने का ज्ञान न था।

अब प्रश्न उपस्थित होता है कि जब वाल्मीकीय रामायण में अहिल्या के प्रस्तर हो जाने की बात नहीं लिखी गई है तब यह कथा कैसे प्रचलित हो गई। इसका पता लगाना चाहिये। किस आधार पर ऐसी असम्भव कथा का जन्म हुआ।

अहल्या के पत्थर बनने का आधार

अध्यात्म रामायण में लिखा है—

> दुष्टेत्वं तिष्ठ दुर्वृत्ते शिलायामाश्रमेमम।
> निराहारा दिवारात्रं तपः परमाश्रिता॥
> आतपानिलवर्षादि सहिष्णुः परमेश्वरम्।
> ध्यायन्ती राममेकाग्रमनसा हृदिसंस्थितम्॥

"हे दुष्टे तू इस आश्रम में शिला पर बैठ यहाँ से जाना नहीं निराहार, रात दिन तप कर धूप हवा वर्षा के कष्ट को सहन कर हृदयस्थ भगवान राम का एकाग्र मन से ध्यान कर।"

जब राम आवें तब उनका आतिथ्य करके तू पवित्र हो जावेगी। राम पद रजः स्पर्श की महिमा यहाँ पर वर्णन है। जब रामचन्द्र यहाँ आये, पैर से उस शिला को स्पर्श किया तब अहल्या का उद्धार हुआ।

इस तरह अध्यात्म रामायण में "शिलायां तिष्ठ—शिला पर बैठ" ऐसा कहा था। जिसका अर्थ शिला रूप हो ऐसा पीछे चल पड़ा और अहल्या पत्थर हो गई थी यह किम्वदन्ती सर्वत्र फैल गई।

आनन्द रामायण में आगे कल्पना में और वृद्धि हो गई वह लिखता है कि राम ने जब शिला को स्पर्श किया तो तब अहल्या स्त्री बन गई। इसके पश्चात् लिखा है कि जब रामचन्द्र नौका में बैठने लगे तब नाविक ने कहा कि मैं पहले आपका चरण पखारूँगा, तब नौका पर बैठने दूँगा। आपकी चरण धूलि से जब पत्थर से स्त्री बन जाती है तब यदि उस धूलि से नौका स्त्री बन जायगी, तो मेरा रोजगार ही मारा जावेगा और मैं दूसरी स्त्री लेकर क्या करूँगा—

इस तरह कथा बढ़ते-बढ़ते, शिला पर बैठ इसके स्थान पर प्रथम शिला का स्त्री होना बना, पश्चात् नाव स्त्री बन जाने की कल्पना तक पहुँची।

अब पाठकों को मालूम हो गया होगा कि किस तरह तिलका पहाड़ बनाया गया है।

विष्णु धर्मोत्तर पुराण के अध्याय १२२ में लिखा है कि ब्रह्मा ने अहल्या को अपने संकल्प से पैदा किया था। यथाः—

गौतमस्य प्रिया भार्या मनसानिर्मितामया।
रूपेणाप्रतिमा शक्र त्वया विध्वंसितायदा॥
तदा गौतमशापेन विफलत्वंगतः स्वयम्!
अहल्या च तदा शप्ता गौतमेन महात्मना॥
अदृश्या सर्वं भूतानां विचरिष्यति दुःखिता।

हे इन्द्र गौतम की प्रिय भार्या को मैंने अपने संकल्प से पैदा किया था। उसको तुमने भ्रष्ट कर दिया और तुमको अण्डकोश पतन का शाप हुआ और अहल्या को गौतम ने शाप दिया कि तू सर्व-प्राणियों से अदृश्य होकर विचरण करेगी।

यहाँ पर आप देखते हैं कि अहल्या पत्थर नहीं हुई थी। परन्तु यह लिखा है कि तू सब प्राणियों से अदृश्य होकर रहेगी। साथ ही वह मानुषी भी नहीं थी। वह ब्रह्मा के मानसिक संकल्प से पैदा हुई थी। ऐसी दशा में गौतम भी कोई विशेष पुरुष नहीं ठहरता, किन्तु अहल्या के समान काल्पनिक ही ठहरता है।

पद्म पुराण सृष्टि खण्ड में भी वह ब्रह्मा की मानसिक कन्या लिखी गई है :—

पुरा स्वान्तोद्भवां कन्यां लोकेशस्य महात्यनः ।
गौतमाय ददौ धाता लोकपालाग्रतोमुदा ॥

पूर्वकाल में संसार के स्वामी ब्रह्मा के मनः संकल्प से उत्पन्न हुई कन्या अहिल्या को लोकपालों के सामने ही गौतम को दे दिया ।

जय अहल्या मानसिक कल्पित स्त्री थी तो गौतम को भी वैसे ही कल्पित मानना पड़ेगा यदि अहल्या किसी मनुष्य की पत्नी होती तो गौतम को भी मनुष्य माना जा सकता था ।

अतः यह कथा आकाशीय है, जैसा कि आगे दिखलाया जायगा ।

—:०:—

ब्रह्मपुराण अ० १६

ब्रह्मदेव ने एक सुन्दर स्त्री निर्माण की । उसका पालन कौन करे इसकी चिन्ता में वह पड़ गया । उसे पता लगा कि इस काम के लिये गौतम योग्य है । तब उसने उसे गौतम के पास रख दिया जब वह तरुणी हो गई तो गौतम ने उसे ब्रह्मदेव को सुपुर्द कर दिया ; गौतम ने उसकी अभिलाषा न की । वह ऋषि का संयम देखकर प्रसन्न हुआ । इसके विवाह का विचार होने लगा । जो पृथ्वी परिक्रमा करके शीघ्र

आवेगा, उसे देने के लिए ब्रह्मा ने संकल्प किया। सब देव पृथ्वी की प्रदक्षिणा करने चले। इधर गौतम ने अर्ध प्रसूता गो की परिक्रमा की और ब्रह्मदेव के पास जाकर बोला। मैंने पृथ्वी प्रदक्षिणा की है। ब्रह्मा ने सब वृत्तान्त जान कर अहल्या के साथ उसका विवाह करा दिया जब सब देव लोग आ गये तो देखा कि अहल्या का विवाह हो चुका है। इन्द्र के मन में बड़ा विषाद पैदा हुआ। शेष देव लोग चले गये। एक बार गौतम अपने शिष्यों के साथ आश्रम से बाहर किसी कार्य के लिये गये। यह अवसर पा इन्द्र आश्रम में घुस गया, और अहल्या के पास पहुँचा। गौतम के समान ही वह व्यवहार करने लगी। वह ऐसा बर्ताव करने लगा कि किसी को भी सन्देह तक न हुआ। इस तरह इन्द्र, गौतम के बाहर चले जाने के बाद बार-बार आश्रम में आने लगा और उसका सम्बन्ध भी अहल्या के साथ होने लगा। आश्रम के लोगों को, इस तरह गौतम शीघ्र क्यों आते हैं। इसका आश्चर्य होने लगा। एक दिन ऐसा हुआ कि जब गौतम बाहर से आये, तब इन्द्र गौतम रूप से अन्दर ही था। इसलिये वहाँ के लोगों ने एक ही समय दो गौतम देखे। एक बाहर और एक भीतर। सब लोग गौतम के योग सामर्थ्य के चमत्कार का वर्णन करने लगे। पर गौतम मुनि ने सन्देह-मग्न होकर अन्दर जाकर वहाँ दूसरे गौतम को देखा और पूछा कि यह कौन है। उस समय अहल्या भी डर गई। उसे पता न लगा कि सच्चा गौतम कौन है। वह कपटी गौतम से अहल्या ने पूछा कि तू कौन है जो प्रतिदिन आकर यहाँ पाप कर्म करता है। यह सुनकर कपटी गौतम घबड़ा कर भागने लगा। गौतम मुनि ने डाट कर पूछा तू कौन है। वह हाथ जोड़ कर बोला :—हे ऋषि! मैं इन्द्र देवों का राजा हूँ। मैं यह पाप कर रहा था। काम के कारण मुझसे यह पाप हुआ। मैं दुष्ट हूँ। तथापि आप शान्त स्वभाव वाले होने के कारण कठोर न होंगे। मुझे क्षमा कीजिये।

गौतम ने कहा—जिस कारण तू भग पर आसक्ति रखकर इस पाप कर्म में प्रवृत्त हुआ है, इस कारण तेरे शरीर पर सहस्र भग होंगे। अहल्या की ओर देखकर बोले—तू शुष्क नदी बन जा।

अहल्या बोली—मैंने जानते हुये मन से पाप नहीं किया है मैं निर्दोष हूँ। वह आपका रुप धारण करके आया, इस कारण मुझसे ऐसा पाप हुआ। आश्रम के कर्मचारी बोले—यह इन्द्र आप जैसा रूप धारण कर प्रतिदिन आता था, इस कारण हम समझते थे कि यह आप ही हैं, अतः अहल्या फँस गई, इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। सबका यह कथन सुनकर गौतम ने जाना कि इसमें अहल्या का दोष नहीं है। यह जानकर गौतम ने पाप के मोचन का मार्ग बतलाया।

भगप्रीत्या कृतं पापं सहस्रभगवान् भव।
तामप्याह मुनिः कोपात् त्वंच शुष्कनदी भव ॥
यदा तु संगताभद्रे गौतम्य सरिदीशया।
नदीभूत्वा पुनःरूपं प्राप्स्यसे प्रिय कृन्मम ॥

हे इन्द्र तुमने भगप्रीति से ऐसा कुकर्म किया अतः तुम्हारे शरीर में सहस्र भग हो जावे और अहल्या को भी कहा कि तू शुष्क नदी हो जा। जब गौतमी नदी से तेरा संगम होगा तब तुम अपने रूप को प्राप्त करोगी। इन्द्र से कहा कि इस अहल्या संगम में स्नान करने से सहस्राक्ष बन जाओगे।

अहल्या संगमेतीर्थे पुण्ये स्नात्त्वा शचीपते।
क्षणान्निर्धूतपापस्त्वं सहस्राक्षो भविष्यसि ॥

इस तरह भिन्न-भिन्न पुराणों में भिन्न-भिन्न प्रकार से कथायें लिखी गई हैं।

अहल्या तीर्थ स्थापन के लिये यह सरस, किन्तु काल्पनिक कथा गढ़ी गई है। शाप से न कोई स्त्री नदी बन सकती है और न किसी के शरीर में हजारों भग हो सकते हैं। यह पौराणिक कल्पना है जिसे समझना साधारण लोगों का काम नहीं है।

—:०:—

पद्मपुराण सृष्टिखण्ड अ० ११

अहल्या ब्रह्मा की कन्या थी—

पुरास्वान्तोद्भवां कन्यां लोकेशस्य महात्मनः।
गौतमाय दौधाता लोकपालाग्रतो मुदा॥

पूर्वकाल में लोकेश महात्मा ब्रह्मा की कन्या अहिल्या को लोकपालों के सामने ही गौतम को धाता ने दे दिया।

एक बार गौतम पुष्कर में स्नान करने गये और इन्द्र गौतम का रूप धरकर अहल्या से मैथुन करने लगे। गौतम उसी समय आ गये। उन्हें देखकर इन्द्र ने बिल्ली का रूप धारण कर लिया। गौतम ने पूछा तू कौन है जो बिल्ली बनकर बैठा है। तब डर के मारे दोनों हाथ

जोड़कर इन्द्र सामने खड़े हो गये। उन्हें गौतम ने शाप दिया कि तेरा लिंग गिर जाय और तेरे शरीर में सहस्त्र भफ हो जावे। अहल्या को शाप दिया कि तेरे शरीर में हड्डी और चर्म शेष रह जावे, मांस गल जाय, नख गिर जावें। तू अकेले ही चिरकाल तक रहेगी जिससे तुम्हें स्त्री पुरुष देख सकें। और जब अहल्या ने अपने उद्धार का समय पूछा तो गौतम ने कहा कि जब रामचन्द्र यहाँ आवेंगे और तुमको दुःखित, सूखी हुई मिर्देह, मार्ग में पड़ीं हुई देखेंगे तो वसिष्ठ से पूछेंगे कियह सूसी हुई, अस्थिमात्रावसिष्ठ प्रतिमा कौन है तब वसिष्ठ सब हाल बतलावेंगे। तब रामचन्द्र कहेंगे कि इसमें इसका दोष तो कुछ नहीं, इसमें तो इन्द्र का दोष है, तो तुम अपने जुगुप्सित रूप को त्यागकर और दिव्य रूप धरकर मेरे घर पर आवोगी। राम के वचन से गौतम आये और उसके साथ अब भी द्युलोक में वर्त्तमान हैं।

रामस्यवचनादेव गौतमः पुनरागतः।
गौतमोपितया सार्धं अद्यवदिवि तिष्टति॥

राम के वचन से ही गौतम फिर आया और वह गौतम भी उसके साथ आज भी द्युलोक में स्थिति है।

पाठक इस श्लोक में ध्यान दें, गौतम अब तक उसके साथ द्युलोक में मौजूद हैं। यदि अहल्या और गौतम पृथिवीस्थ मनुष्य होते तो कभी ही मर गये होते, परन्तु आज तक वे दोनों द्युलोक (जहाँ सूर्य हैं) में मौजूद हैं अतः यह कथा आकाशीय है, यह सिद्ध होता है।

साथ ही यह कथा पुष्करतीर्थ की है, पर वास्तविक घटना मिथिला में हुई थी इसलिये यह कथा भी काल्पनिक है।

पाठकों, पिछले दिये हुए प्रमाणों को पढ़कर आपको इतना तो मालूम हो गया होगा कि अहल्या पत्थर नहीं हुई थी। गौतम और